प्रथम अध्याय

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

अध्याय–प्रथम

शोध परिचय

1.1 शिक्षक का महत्व

शिक्षक, समाज और राष्ट्र के निर्माण का मूलाधार है। शिक्षक पर ही समाज की उन्नति निर्भर होती है। शिक्षक पालकों को समुचित शिक्षा प्रदान कर देश के भविष्य को उज्जवल करता है। शिक्षक का महत्व अगाध है, अवर्णनींय है। प्राचीन काल में शिक्षक को गुरू का स्थान दिया गया। गुरू को भगवान तुल्य माना जाता था कहा जाता है –

गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु गुरु देवो महेश्वरा।

गुरु साक्षात परब्रह्मा तस्मै श्री गुरूवे नमः ।।

गुरू को त्रिमूर्ति का दर्जा दिया गया है। ब्रह्मा जो ज्ञान का भंडार है, विष्णु ज्ञानदाता है और शिव ज्ञान का सदउपयोगिकर्ता है। विवेकानंद का कहना है कि जो शिक्षक विद्यार्थियों के स्तर पर उतरकर उनकी आत्मा का परीक्षण करके शिक्षा देता है वहीं सच्चा शिक्षक है। जवाहरलाल नेहरू के अनुसार चार प्रकार के शिक्षक होते हैं। सामान्य शिक्षक वह है जो केवल कहता है। अच्छा शिक्षक वह है जो समझाता है। उत्तम शिक्षक वह है जो प्रदर्शित करता है और महान शिक्षक वह है जो विद्यार्थियों को प्रेरणा देता है। अध्यापक का महत्व एक निम्न उक्ति से प्राप्त होता है ''भवन निर्माण में जो स्थान ईटों का है, राष्ट्र निर्माण में वहीं स्थान शिक्षक का है।''

किसी भी देश या समाज की प्रगति के लिए शिक्षा एक महत्वपूर्ण एवं आवश्यक साधन है। शिक्षा विकास की प्रक्रिया है। यह बालक के अन्दर निहित प्रकृति–प्रदत्त जन्मजात शक्तियों का प्रकटीकरण कराती है, उन्हें बाहर निकालती है। महात्मा गांधी के अनुसार शिक्षा से अभिप्राय बालक तथा मनुष्य में अर्न्तनिहित

शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक श्रेष्ठतम को प्रकाश में लाना है। स्पष्ट है कि शिक्षा का मुख्य लक्ष्य बालक का सर्वांगीण विकास करना है। इस विकास प्रक्रिया मे शिक्षक की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। शिक्षा की सम्पूर्ण प्रक्रिया तीन महत्वपूर्ण घटकों के चारों तरफ चलती है। यह है–शिक्षक, छात्र एवं पाठ्यक्रम। इन तीनों घटकों में शिक्षक का स्थान सर्वोपरि है। शिक्षक शिक्षारूपी सम्पूर्ण तंत्र का नियन्ता एवं संचालक है। शिक्षक की प्रतिबद्धता केवल विद्यालय के पाठ्यक्रम को सत्र भर पढ़ाना ही एकमात्र लक्ष्य नहीं होता है बल्कि वह व्यक्तित्व निर्माण, भावी नागरिकों का प्रशिक्षण उनका चारित्रिक विकास तथा समस्त विकासों को गति प्रदान करता है।

किसी भी राष्ट्र की शिक्षा प्रणाली में सबसे महत्वपूर्ण स्थान शिक्षक का होता है। शाला की उन्नति अथवा विकास के लिए उचित पाठ्यक्रम श्रेष्ठ पाठ्यपुस्तकें, उत्तम शिक्षा साधन तथा उपयुक्त शालागृहों की आवश्यकता तो है ही परंतु उससे कहीं ज्यादा आवश्यकता है उपयुक्त अध्यापकों तथा अध्यापिकाओं की। वे ही शिक्षा पद्धति को चलाते हैं। अच्छे शिक्षकों के अभाव में किसी भी देश की शिक्षा पद्धति निर्जिव और निस्तेज हो जाती है। इसी तथ्य को समझकर प्राचीन भारत में शिक्षकों का एक विशिष्ट स्थान था। लेकिन अंग्रेजों के शासन काल में अध्यापकों की स्थिति सोचनीय हो गयी। इसलिए स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात सरकार द्वारा नियुक्त राधाकृष्णन आयोग, मुदालियार आयोग तथा कोठारी आयेाग आदि ने इस बात पर बल दिया कि अध्यापकों की आर्थिक, सामाजिक और व्यावसायिक दशाओं को सुधारे बिना शिक्षक का उत्तरदायित्व अपूर्ण ही रहेगा। देश के सारे शिक्षा शास्त्री विद्वान, राजनीतिज्ञ और प्रशासक यह स्वीकार करते हैं कि देश जिस संकटकालीन दौर से गुजर रहा है उसमें अध्यापक ही उसे सम्बल प्रदान कर सकते हैं।

बालक के सर्वांगीण विकास में शिक्षक को बड़ा ही महत्वपूर्ण कार्य करना पड़ता है। शिक्षक ही वास्तव में बालक का समुचित शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक,

सामाजिक एवं संवेगात्मक विकास कर सकता है। विद्यालय प्रांगण में भी शिक्षक को महत्वपूर्ण भूमिका निभानी पड़ती है। सम्पूर्ण विद्यालय योजनाओं को वही व्यावहारिक रूप देता है। अच्दी से अच्छी शिक्षण पद्धति प्रभाव रहित हो जाती है यदि शिक्षक सही ढंग से प्रयोग न करे। जिस प्रकार विद्यालय जीवन में प्रधानाध्यापक मस्तिष्क के रूप में होता है शिक्षक आत्मा स्वरूप होता है। आत्मा के बिना शरीर (विद्यालय) निर्जीव होता है। शिक्षक ही विद्यालय जीवन का गतिदाता है।

1. शिक्षा का रक्षक :-

समाज में प्रचलित शिक्षा का रक्षक भी शिक्षक ही होता है। वास्तव में कोई भी शिक्षा व्यवस्था शिक्षकों के स्तर से ऊपर नहीं जा सकती हे। जिस स्तर के शिक्षक होंगे, उसी स्तर की शिक्षा व्यवस्था होगी। शिक्षा की गुणात्मक स्थिति शिक्षकों की स्थिति तथा उनके गुणात्मक पहलू पर निर्भर है।

2. राष्ट्र का मार्गदर्शक :-

डॉ. राधाकृष्णन के अनुसार, शिक्षक राष्ट्र के भाग्य के मार्गदर्शक है। शिक्षक बौद्धिक परंपराओं तथा तकनीकी की कौशलों की पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरण करने में धुरी का कार्य करता है। वह सभ्यता एवं संस्कृति का संरक्षक तथा परिमार्जनकर्ता है। वह बालक का ही मार्गदर्शक नहीं वरन सम्पूर्ण राष्ट्र का मार्गदर्शक है।

3. राष्ट्र की उन्नति में स्थान :-

अव्यापक का राष्ट्र की प्रगति में महत्वपूर्ण स्थान है। कहा भी जाता है कि ''एक आदमी हत्या करके एक ही जीवन का अन्त करता है। किन्तु शिक्षक गलत शिक्षा देकर संपूर्ण परिवार की हत्या करता है। तथा संपूर्ण राष्ट्र का अहित करते हैं।'' शिक्षक अपने समुचित शिक्षण से ऐसे व्यक्तियों का निर्माण करते हैं, जो राष्ट्र की प्रगति के आधार होते हैं।

4. भविष्य निर्माता

डॉ. जाकिर हुसैन के अनुसार ''वास्तव में शिक्षक हमारे भाग्य निर्माता है। समाज अपने ही विनाश पर उनकी उपेक्षा कर सकता है।'' प्रो. हुमायूं कबीर ने लिखा है : शिक्षक राष्ट्र के भाग्य निर्णायक होते हैं वे ही पुनः निर्माण की कुंजी है।

5. संस्कृति का पोषण :-

गारफोर्थ के शब्दों में ''शिक्षक के माध्यम से ही संस्कृति पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित होती है, समाज की परंपरायें नवयुवकों को ज्ञात होती है, तथा वही नये एवं रचनात्मक उत्तरदायित्व ऊजाये छात्रों को सौंपता है।''शिक्षक संस्कृति का परिमार्जक एवं रक्षक है।

शिक्षा समस्त व्यवसायों की माता है। इसलिए शिक्षक को इन व्यवसायों के पिता की उपमा प्रदान की जाती है। वैदिक काल में शिक्षक को ब्रह्मा, विष्णु, महेश के तुल्य माना गया है अर्थात् रक्षक, पालक तथा कल्याणक, तीनों महत्वपूर्ण भूमिकाओं में व्यक्ति एवं समाज का कल्याण करता है। इस प्रकार शिक्षक की सीमित परिधि में व्यक्ति का निर्माण होता है। जो अंततोगत्वा संपूर्ण राष्ट्र का निर्माता बनता है। आचार्य रजनीश के अनुसार हमारे भावि नागरिक विद्यालयों की बेन्चों पर बैठे हुए हैं और उनका सही पथ प्रदर्शन शिक्षक ही कर सकता है। बालक के शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक व नैतिक विकास में शिक्षक बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका रखता है। वह अपने सद्प्रयासों से बालक का सफल मार्गदर्शन कर उसके व्यक्तित्व का संतुलित विकास कर उसे सफल नागरिक बनाता है। इस रूप में वह न केवल बालक का ही कल्याण करता है वरन् समूचे समाज तथा राष्ट्र की भलाई करता हे। इसलिए तो भारतीय दर्शन में उसे ब्रह्मा का रूप दिया गया है। यह ब्रह्मा स्वरूप शिक्षक ही सृजनात्मकता तथा विध्वंसात्मक शक्तियों का प्रदाता तथा स्त्रोत है। इसी की प्रदत्त शिक्षा के आधार पर हम कल्याणकारी तथा विनाशकारी शक्तियों

का निर्माण करते है। इसलिए कहा जाता है कि यदि विनाश पर आ जाये तो शिक्षक एक चिकित्सक, भवन निर्माता तथा पुजारी से भी अधिक विनाश कर सकता है।

अध्यापक के उत्तरदायित्व निम्नलिखित हैं :-

- छात्रों का शैक्षिक एवं चारित्रिक विकास करना।
- छात्रों के कार्यों का मूल्यांकन करना।
- छात्रों का व्यावसायिक विकास करना।
- कक्षा का प्रबन्ध एवं समूचित शिक्षण देना।
- पाठ्यक्रमों सहभागी क्रियाओं का संचालन करना।
- सामाजिकता एवं नागरिकता की शिक्षा देना।

1.2 मूल्य का अर्थ

शाब्दिक रूप में यदि देखा जाये तो मूलय को अंग्रेजी में वेल्यू कहते हैं और वेल्यू लैटिन भाषा का शब्द वैलियर से बना है, वैलियर का अंग्रेजी में अर्थ है एबिलिटी, यूटिलिटी, इम्पोरटेण्ट तथा हिन्दी में अर्थ है, योग्यता, उपयोगिता व महत्व। शाब्दिक अर्थ के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि व्यक्ति या वस्तु का वह गुण जिसके कारण उसका महत्व, सम्मान या उपयोग समझा जाता है, वह मूल्य है। मूल्य से आशय वह वस्तुयें या बातें हैं जिनमें व्यक्ति रूचि लेता है। मूल्य शब्द से अभिप्राय भावात्मक दृष्टि से मानव गुणों को अभिव्यक्त करता है। हिन्दी में मूल्य शब्द से पर्याय में आदर्श, शील, गुण आदि शब्दों का प्रयोग हुआ है।

प्रत्येक समाज में कुछ आदर्श हैं। जिन पर सामाजिक प्रगति तथा परिवर्तन की दिशा निर्भर करती है। समाज समूह में जो घटना होती है, समाज उसका उचित अथवा अनुचित के रूप में मूल्यांकन करता है। इसी के आधार पर समाज में घटित

घटना को सही या गलत, उचित या अनुचित ठहराया जाता है और ये ही मूल्य कहलाते हैं।

मूल्य हमारे आचरण का निर्धारण करते हैं। जीवन के स्तरों का निर्माण करते हैं। मूल्य शारीरिक, मानसिक, स्वास्थ्य व प्रसन्नता, साहस व निर्भीकता, विवेकज्ञान परोपकारिता आदि के सामंजस्य में सहायक होते हैं क्योंकि इन्हीं के मिलन से व्यक्तित्व का विकास होता है। मूल्यों के द्वारा उत्तम साहचर्य व अच्छे पड़ोसीपन की भावना जागृत होती है। परस्पर सहानुभूति, प्रेम, भाईचारा आदि भावना पनपती है। इसी के द्वारा मानव अस्तित्व व इसके सदस्यों को जानने की उत्सुकता, कल्पना, मनन, चिन्तन करना, धर्मज्ञान व रहस्यवाद की सहायता से तथा उपासना, प्रार्थना, मनन, चिन्तन, कविता व ज्ञान के माध्यम से विश्व की एक झलक पाने की इच्छा जागृत होती है। इस प्रकार यह सही है कि मूल्य हमारे जीवन के लिए बहुत अनिवार्य है।

1.3 मूल्य की व्याख्या

परिभाषिक रूप में मूल्य का अभिप्राय हित, आनंद, वरियताएँ, कर्तव्य, नैतिक दायित्व, आकांक्षाएं, अपेक्षायें और आवश्यकताओं पसंद और बदलाव से है। मूल्य आमतौर पर कर्म की दृष्टि से चयन के मानदंड होते हैं। मूल्य वे मानदण्ड अथवा व्यवहार के नियम होते हैं। जो कमोबेस स्पष्ट ढंग से यह बताते हैं कि कुछ विशेष परिस्थतियों में हमें क्या करना चाहिए और क्या नहीं करना चाहिए।

मूल्य किसी वस्तु या स्थिति का वह गुण है जो समालोचना व वरियता प्रकट करता है। यह एक आदर्श या इच्छा है, जिसे पूरा करने के लिए व्यक्ति जीता है तथा आजीवन प्रयास करता रहता है। दूसरे शब्दों में मूल्य को आचार, सौन्दर्य, कुशलता या महत्व का मानदंड माना गया है, जिनके साथ हम जीते हैं जिन्हें कायम रखते हैं।

1.4 मानव मूल्य का अर्थ

मूल्य किसी भी राष्ट्र की अमूल्य निधि माने जाते हैं। मानवीय मूल्य हमारे आचरण को निर्धारित करते हैं, तथा जीवन शैली को संतुलित रखते हुए जीवन स्तर को ऊँचा बनाये रखने में मदद देते हैं। जीवन के अर्थ, गुण, धर्म और विकल्पों का निर्धारण करते हैं। निजी जीवन के विविध आयामों को ही नहीं वरन् मानव समुदाय के समस्त वैयक्तिक, धार्मिक, शैक्षिक, भौतिक, सामाजिक एवं मानवतावादी पक्षों को नियमित व प्रभावित करने वाली शक्तियों का ही दूसरा नाम मूल्य है। मानव मूल्य एक ऐसी आचरण संहिता या सदगुण समूह है, जिसे अपने संस्कारों एवं पर्यावरण के माध्यम से अपनाकर मनुष्य अपने निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु अपनी जीवन पद्धति का निर्माण करता है, अपने व्यक्तित्व का विकास करता है। इसमें मनुष्य की धारणायें, विचार, विश्वास, मनोवृत्ति, आस्था आदि समेकित होते हैं।

1.5 मूल्यों का संप्रत्यय

मूल्य संवेगों से युक्त होते हैं। मूल्यों से प्रेरित होकर व्यक्ति मूल्यों की ओर अग्रसर होता है। यदि कोई क्रिया या अनुभव हमारे संवेगों को जगा दे तो मूल्यों के निर्माण की स्थिति का शुभारंभ हो सकता है। ''ब्राउण्डी'' ने मूल्यों के विकास के सिद्धान्तवाद में संवेगात्मक सिद्धान्त को स्थान दिया है।

''गेजेर'' ने माना है कि अनेक विकल्पों में से हम एक विकल्प चुनते हैं, यही मूल्य की आवश्यकता का एक रूप है। मूल्य संतोष की अनुभूति कराने वाले होते हें। जिन क्रियाओं एवं अनुभवों से व्यक्ति संतोष प्राप्त करता है, वे ही अनेक मूल्यों के रूप में उभर कर आते हैं। जिन क्रियाओं से व्यक्ति को संतोष नहीं मिल पाता, व्यक्ति के मूल्य स्वीकार नहीं हो पाते हैं। अतः मूल्यों का व्यक्तित्व विकास में महत्वपूर्ण स्थान रहा है।

1.6 मूल्यों के संबंध में कुछ परिभाषाएँ

स्किनर – ''मूल्य एक प्रकार की अनोखी शाब्दिक संकल्पनाओं को कहते हैं जिनका संबंध इस बात से है कि विशिष्ट प्रकार की वस्तुओं, क्रियाओं और परिस्थितियों को अलग–अलग व्यक्ति या समूह क्या महत्व देते हैं।''

जैक आर. फ्रेकल–का मत है कि ''मूल्य आचार, सौन्दर्य, कुशलता या महत्व के वे मानदण्ड है जिनका लोग समर्थन करते हैं, जिनके साथ वे जीते हैं, तथा जिन्हें वे कायम रखते हैं।''

आर.बी. परसी–''ने मूल्यों को सामाजिक दृष्टि से स्वीकार्य उन इच्छाओं तथा लक्ष्यों के रूप में परिभाषित किया है जिन्हें अनुबंधन, अधिगम या सामाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा आभ्यन्तरीकृत किया जाता है तथा जो आत्मनिष्ठ प्राथमिकताओं, मान तथा आकांक्षाओं का रूप ग्रहण कर लेती है।''

पारसन्स के अनुसार–''मूल्य किसी भी समाज में समाज व्यवस्था के विभिन्न ओरियन टेशन्स में एक चयन का मानदण्ड है।''

आलपोर्ट–''मूल्य एक मानव विश्वास है जिसके आधार पर मनुष्य वरीयता प्रदान करते हुए कार्य करता है।''

ई.एस. ब्राइटमैन के अनुसार–''अनुभवों से वास्तविक आनन्द पाने तथा इच्छित उद्देश्यों और क्रियाकलापों को पाने के साधन को मूल्य माना है।''

एच.एच. टाइटस–''मूल्य किसी वस्तु या स्थिति का वह गुण है जो समालोचना एवं वरीयता प्रकट करता है।''

टिट्रस–''मूल्य वह है जो हमारी आवश्यकता व इच्छाओं को संतुष्ट करते हैं।''

कुलक होम–''मूल्य इच्छाओं के वे प्रत्यय है जो चयनात्मक व्यवहार के लिए महत्वपूर्ण होते हैं।''

लूमिस–''मानव व्यवहार का निर्धारक, जो वैकल्पिक लक्ष्यों से उपयुक्त लक्ष्य के चयन के मापदण्ड का कार्य करता है, वह मूल्य है।''

जोड के अनुसार–''मूल्य उतने ही सत्य होते हैं जैसे–रंग, गंध, स्वभाव, आकार व आकृति।''

जान्स के अनुसार–''मूल्य वह प्रेरणा है जो व्यक्ति के प्रयासों को संतुष्ट करती है जिससे वह अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सके।''

मरफी व न्यूकाम के अनुसार–''मूल्य का अर्थ है लक्ष्य प्राप्ति की ओर उन्मुख होना।''

डिक्शनरी ऑफ एज्यूकेशन (गुड) के अनुसार–''मूल्य एक ऐसी विशेषता है जिसे मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, नैतिक या सौन्दर्यात्मक विचारों के परिप्रेक्ष्य में उत्कृष्ट एवं महत्वपूर्ण समझा जाता है तथा ये उस व्यक्ति या व्यक्तियों में अन्तर्निहित होते हैं जो उसके विश्वास के अनुसार सुरक्षा व राजनैतिक सहायता प्रदान करते हैं।''

डॉ. राधाकमल मुखर्जी के शब्दों में–''समाज में समस्त ऐसी इच्छाएँ या अभिलाषाएँ मूल्य कही जाती है जो कि अनुबंधन की प्रक्रिया द्वारा व्यक्ति में अर्न्तनिहित हो जाती है जो कि सामाजिककरण की प्रक्रिया द्वारा भी उस व्यक्ति की प्राथमिकताओं, रूचियों, महत्वकांक्षाओं के रूप में प्रकट होती है।''

रथ व अन्य–''मूल्य तीन प्रक्रियाओं पर आधारित होते हैं। चुनना, महत्व देना व क्रिया करना। व्यक्ति अनेक विकल्पों में से कुछ की प्रत्येक विकास के

परिणामों के बारे में स्वतंत्रतापूर्वक चर्चा करने के बाद चुनता है, वह अपने चयन को महत्व देता है। वह अपने चयन के आधार पर क्रिया करता है तथा वह क्रिया जीवन प्रतिमानों के रूप में बार–बार होती है। यह सभी प्रक्रियायें सामूहिक रूप से मूल्य निर्धारण को परिभाषित करती है।''

वास्तव में यदि देखा जाये तो मूल्य वह है जो सभी बातों का निर्धारण करते हैं। वास्तव में यह मूल्य ही है जो इस जगत को अर्थ प्रदान करते हैं। साथ ही प्रत्येक व्यक्ति, घटना, क्रिया को अर्थ प्रदान करते हैं। इस जगत में होने वाला छोटा सा परिवर्तन मूल्यों से परिवर्तन के फलस्वरूप ही होता है व उसे मूल्यों के आधार पर ही समझा जा सकता है।

1.7 मूल्यों का वर्गीकरण

गोला इटली ने 1. आवश्यक Essential 2. संक्रियात्मक Operational मूल्यों का विभेदन किया है।

लेविस–ने आन्तरिक, बाह्य, अन्तर्भूण तथा सहायक मूल्यों का वर्गीकरण प्रस्तुत किया है।

कार्नेल–ने निश्चयात्मक तथा क्रियात्मक मूल्यों का उल्लेख किया है।

पैरी ने सकारात्मक, निषेधात्मक, प्रगतिशील आवर्ती, सम्भावित, वास्तविक आदि मूल्य वर्गों की चर्चा की है।

वी.एन. रेड्डी ने अपनी पुस्तक ''मैन एज्यूकेशन एण्ड वेल्यूज'' में भौतिक, आर्थिक और मनोवैज्ञानिक मूल्यों का उल्लेख किया है।

स्प्रेंगर के अनुसार–मूल्यों को छः श्रेणियों में विभक्त किया गया है। सैद्धान्तिक, आर्थिक, सौन्दर्यात्मक, सामाजिक, राजनीतिक तथा धार्मिक।

1. सैद्धान्तिक मूल्य :–

इसे मुख्यतः सत्य की खोज से प्रभावी रूचि, आनुभाविकता, आलोचनात्मकता, विवेक एवं बौद्धिक पक्षों में पहचाना जाता है। अपने दुःखों को भुलाकर उज्जवल भविष्य की ओर अग्रसर होना है।

2. आर्थिक मूल्य :–

ये मुख्यतः प्रभावी मुद्रा के मामलों से पहचाने जाते हैं। आर्थिक क्षेत्र में विशेष रूप से रूचि लेने वाले व्यक्ति उपयोगिता पर अधिक बल देते हैं। ऐसे व्यक्ति व्यावहारिक होते हैं। सदैव अधिक धन पाने का प्रयत्न करते हैं और धन संग्रह करते हैं। वह ईश्वर को भी भौतिकीय सुखों को देने वाला मानते हैं, और ऐसे काम करने की इच्छा जिसे देश को और समाज को फायदा हो।

3. सौन्दर्यात्मक मूल्य :–

प्रकृति प्रेम, सुन्दरता की प्रशंसा, वनों की रक्षा आदि सौन्दर्यात्मक मूल्य है। व्यक्ति से यह अपेक्षा की जाती है कि वह सुन्दर वस्तु से प्रेम करे व जिस धरातल पर वह रहता है उसे स्वच्छ व सुन्दर बनाये रखने का प्रयास करे। ऐसे व्यक्ति ललित कलाओं में विशेष रूचि रखते हैं। उनके जीवन का उद्देश्य सौन्दर्य की खोज होता है। ऐसे व्यक्ति सौन्दर्य को अधिक महत्व देते हैं।

4. सामाजिक मूल्य :–

सामाजिक मूल्य वह है जिसमें व्यक्ति समाज को महत्वपूर्ण स्थान देता है। इन मूल्यों में समाज सहायता, दया, प्रेम, सहानुभूति, संस्कृति का संरक्षण, मान व सेवा आदि भावनाएं सम्मिलित होती है। यह मूल्य वह होते हैं जिनके द्वारा व्यक्ति समाज के कल्याण की कल्पना करता है। मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, इसलिए सामाजिक मूल्य होना बहुत जरूरी है। ऐसे लोग दयालु, सहनशील, परोपकारी व

निःस्वार्थ प्रकृति के होते हैं। समाज एवं सामाजिक प्राणियों से प्यार करना उनकी प्रमुख अभिरूचियां अथवा विशेषताएँ हैं।

5. राजनैतिक मूल्य :–

देशभक्ति, राष्ट्रीय एकता, राष्ट्रीय सचेतनता आदि मूल्य है जिन्हें हम राजनैतिक मूल्यों की श्रेणी में रखते हैं। इनका उद्देश्य व्यक्ति को योग्य नागरिक बनाना होता है जिससे वो अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति जागरूक हो सके। स्वतंत्रता का सम्मान करे धर्म, जाति, लिंग, भाषा में भेद न करे सभी के लिए एक ही नियम का पालन करना है।

6. धार्मिक मूल्य

भक्ति, भगवान पर विश्वास, धर्मनिरपेक्षता, सभी धर्मों का आदर करना इसका अभिप्राय है कि व्यक्ति के अंदर आध्यात्मिक व धार्मिक मूल्यों को समाहित किया गया है। भारत जैसे धर्मनिरपेक्ष देश में व्यक्ति का आध्यात्मिक व धार्मिक विकास किया जाना चाहिए। साथ ही उसके अंदर बहुत ही कट्टर धार्मिक दृष्टिकोण उत्पन्न नहीं होना चाहिए। धार्मिक मूल्य की प्रचुरता वाले व्यक्तियों की धर्म के प्रति विशेष आस्था होती है। ये धर्म ग्रन्थों के अध्ययन में व धार्मिक रीति–रिवाजों, क्रिया–कलापों में विशेष रूचि रखते है। इनकी मुख्य अभिरूचि आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करना होती है।

1.8 जीवन मूल्यों का वर्गीकरण

जीवन मूल्य सुबह की ओस की बूंदों की तरह नहीं है जो कि मौसम के अनुसार दिखाई पड़े बल्कि इनकी जड़े हर प्राणी में बहुत गहरी विद्यमान होती है। इनका वास्तविकता के साथ घनिष्ठ संबंध है। यह हमको निर्देशित करती है। हमारी जीवनशैली को ऊंचा उठाती है एवं आत्म मूल्यांकन हेतु मापदण्ड प्रस्तुत करती है और जीवन को गुणों के स्तर पर स्थापित करती है। इस संसार में कोई भी ऐसा मापन

नहीं है जिसके माध्यम से मूल्यों के गठन के स्तर को सही–सही मापा जा सके क्योंकि सभी मूल्यों का महत्व अपने अपने समाज के परिप्रेक्ष्य में बदलता रहता है। मूल्य किसी वस्तु या स्थिति का वह गुण है जो समालोचना एवं वरीयता प्रकट करते हैं।

डॉ. प्रेम कृपाल कहते हैं कि "जिस पर हम विश्वास करते हैं–वे स्वीकृत मूल्य है, जिनका हम अभ्यास करते हैं–वे क्रियात्मक मूल्य है जिनका हम अनुभव करते हैं और परम्पराओं के नवीनीकरण के लिए जिनको अपनाते हैं–वे पारम्परिक मूल्य है।

1.9 तिरासी जीवन मूल्य

राष्ट्रीय शैक्षणिक प्रशिक्षण एवं अनुसंधान परिषद नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित एक पुस्तिका में निम्नलिखित तिरासी नैतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का परिगणन किया गया है। पुस्तिका के संपादक श्री बी.आर. गोयल का कथन है क इन मूल्यों का निर्धारण विविध शैक्षणिक आयोगों तथा गांधी साहित्य के अध्ययन के आधार पर किया गया है।

1.	दूसरों के सांस्कृतिक मूल्यों की सराहना।	43.	अच्छे बुरे में विभेद का भाव।
2.	अस्पृश्यता विरोध	44.	सामाजिक उत्तरदायित्व का भाव।
3.	नागरिकता	45.	स्वच्छता।
4.	दूसरों की चिन्ता	46.	साहस।
5.	दूसरों का ध्यान रखना	47.	जिज्ञासा।
6.	सहयोग	48.	धर्म।
7.	सामान्य अच्छाई	49.	अनुशासन।

8.	प्रजातांत्रक निर्णय लेना	50.	सहनशीलता
9.	व्यक्ति की महत्ता	51.	समानता।
10.	शारीरिक कार्य का सम्मान	52.	मित्रता।
11.	साथी भावना	53.	वफादारी।
12.	अच्छे आचरण	54.	स्वतंत्रता।
13.	राष्ट्रीय समाकलन	55.	दूरदर्शिता।
14.	आज्ञा पालन	56.	सज्जनता।
15.	समय का सद्पयोग	57.	कृतज्ञता।
16.	ज्ञान की खोज	58.	ईमानदारी।
17.	संयम	59.	सहायता।
18.	करूणा	60.	मानवतावादी।
19.	सामान्य लक्ष्य	61.	न्याय।
20.	शिष्टाचार	62.	सत्यता।
21.	भक्ति	63.	सहिष्णुता।
22.	स्वास्थ्य कर जीवन	64.	सार्वभौमिक सत्य।
23.	अखण्डता	65.	सार्वभौमिक प्रेम।
24.	शुचिता	66.	राष्ट्रीय व जन सम्पत्ति का महत्व।
25.	निष्कपटता	67.	पहल।
26.	आत्म नियंत्रण	68.	दयालुता।
27.	साधन सम्पन्नता	69.	जीवों के प्रति दया।
28.	नियमितता	70.	धर्म परायणता।
29.	दूसरों का सम्मान	71.	नेतृत्व।
30.	सादा जीवन	72.	राष्ट्रीय एकता।

31.	वृद्धावस्था का सम्मान	73.	राष्ट्रीय सचेतनता।
32.	सामाजिक न्याय	74.	अहिंसा।
33.	स्वानुशासन	75.	शांति।
34.	स्व–सहायता	76.	देश भक्ति।
35.	स्व–सम्मान	77.	समाजवाद।
36.	आत्म विश्वास	78.	सहानुभूति।
37.	स्व–समर्थन	79.	धर्म निरपेक्षता।
38.	स्वाध्याय	80.	पृच्छा भाव।
39.	आत्म निर्भरता	81.	दल भावना।
40.	आत्म नियंत्रण	82.	समय की पाबन्दी।
41.	समाज सेवा	83.	दल–कार्य।
42.	मानव जाति की एकात्मकता		

1.10 मूल्य शिक्षा का अर्थ –

शिक्षाविद् मूल्य शिक्षा का अर्थ अलग–अलग बताते हैं कोई इसे चरित्र निर्माण की शिक्षा समझता है तो कोई व्यक्तित्व के पूर्ण विकास की शिक्षा समझता है। मूल्य शिक्षा का संबंध व्यक्ति के उन गुणों के विकास से है जो उसके व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनाकर उसे समाज का एक महत्वपूर्ण उपयोगी अंग बना दे और साथ ही को भविष्य में इस योग्य बना दे कि वो दूसरों के हित में अपना हित समझे। सच्चे अर्थों में उसका व्यक्तित्व इस प्रकार उभर कर आये कि वह समाज और राष्ट्र के लिए उपयोगी हो। यदि हम साधारणतया मूल्य शिक्षा के बारे में विचार करे तो कह सकते हैं कि जो शिक्षा मूल्यों से संबंध रखती है वह मूल्य शिक्षा कही जाती है।

1.11 मूल्य शिक्षा की आवश्यकता

शिक्षा शब्द लैटिन भाषा के ''एजुकेयर'' शब्द से उत्पन्न हुआ है इसी अनुरूप में अंग्रेजी भाषा में इसे ''एज्यूकेशन'' कहा जाता है। जिसका शाब्दिक अर्थ है पालन पोषण करना या मार्ग दिखाया अर्थात व्यक्ति के अर्न्तनिहित गुणों को प्रकाश में लाना और स्पष्ट करना। कुल मिलाकर शिक्षा एक जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है जो जन्मजात शक्तियों का प्रस्फुटन करती है व व्यक्तित्व को पूर्णता प्रदान करती है। शिक्षा का सामाजिक दायित्व यह है कि वह विद्यार्थियों में ऐसे गुणों का आवलंबन करें जिससे उनके चरित्र का विकास हो व समाज हित में उनमें सचेतना विकसित हो। मूल्य आधारित शिक्षा विद्यार्थियों को नैतिक रूप से समृद्ध बनाती है। जिसकी आज परम आवश्यकता है। किन्तु तीव्र आर्थिक विकास और सामाजिक रूपांतरण के कारण आज भारतीय समाज संक्रमण के दौर से गुजर रहा है। पहले जमाने में संयुक्त परिवार व्यवस्था प्राथमिकता का केन्द्र थी जिसका लाभ यह था कि माता–पिता, दादा–दादी व अन्य परिजन बच्चों को सांस्कृतिक ओर नैतिक मूल्यों की शिक्षा देते थे। इस तरह ऐतिहासिक दृष्टि से भारतीय शिक्षा प्रणाली में शिक्षा के अभिन्न अंग के रूप में मूल्यों की शिक्षा का स्पष्ट समावेश पाया जाता था। किन्तु आज संदर्भ व परिस्थितियां बदल चुकी हैं। परिवारों में संयुक्त प्रथा टूटने के कगार पर है। माता–पिता दोनों काम करते हैं और एकल परिवारों का प्रचलन बढ़ चुका है। बच्चों की भावात्मक और नैतिक आवश्यकताओं की पूर्ति का ध्यान अभिभावक नहीं रख पाते, न ही दादा दादी व अन्य परिजन पास होते हैं। जिस कारण संस्कृति, सदाचार, नैतिक मूल्य परिवार के दायरे से बाहर हो गए हैं। अतः आज की परिस्थतियों में यह एक बड़ी समस्या बन गई है कि चारों ओर मूल्यों का ह्रास हो रहा है।

1.12 मूल्यपरक शिक्षा

मूल्यपरक शिक्षा के माध्यम से हीं हम बालकों में सहयोग, सहानुभूति, परोपकार, भ्रातृत्व की भावना, कर्तव्यनिष्ठा, स्वाभिमान, श्रम की महता, न्याय, आत्म विश्वास, आत्म नियंत्रण, सेवा भाव तथा ईमानदारी और मानवतावाद की भावना विकसित कर सकते हैं। मूल्यपरक शिक्षा लच्छेदार भाषण देने से या कक्षाओं में बैठकर योजना बनाने से सम्भव नहीं है। मूल्यपरक शिक्षा की पृष्ठभूमि तो कर्तव्यपरायणता, त्याग, सहयोग, सहनशीलता, विनम्रता, समता आदि गुणों की आवश्यकता होती हे। इन गुणों का अनुपालन व्यक्ति अपने दैनिक जीवन में करें इसके लिए व्यक्ति स्वयं, अभिभावक, परिवार, समुदाय और शिक्षा संस्थाएं अपने–अपने सार पर निरन्तर प्रयास करें। जीवन मूल्य मानवीय आचरण तथा व्यवहारों का मापदण्ड होते हैं। पं. दीनदयाल उपाध्याय ने कहा है कि ''शिक्षा एवं संस्कार से जीवन मूल्य बनते एवं सुदृढ़ होते हैं''।

आचार्य राममूर्ति समिति ने मूल्यपरक शिक्षा के सम्बन्ध में अपनी सिफारिशों में कहा है कि ''लोकतंत्र, धर्म निरपेक्षता, समाजवाद, वैज्ञानिक स्वभाव, स्त्री पुरूष समता, ईमानदारी, सत्यनिष्ठा, शौर्य, सभी जीवों का आदर विभिन्न संस्कृतियों एवं भाषाओं आदि मूल्यो का वर्णन करते हैं जो कि राष्ट्र की एकता तथा अखण्डता के लिए अनिवार्य है।''

1.13 भारतीय संविधान और राष्ट्रीय मूल्य

जीवन मूल्यों के स्वरूप निर्धारण संबंधी मार्गदर्शन की दृष्टि से हमारे संविधान की प्रस्तावना विशेष महत्वपूर्ण है। यह प्रस्तावना उन उद्देश्यों, आदर्शों और सिद्धांतों का वर्णन करती है। जिसके प्रकास में हमारा संविधान निर्मित हुआ है। शिक्षा नीति के लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु हमारी शिक्षण पद्धति का मूल्यपरक होना वांछनीय ही नहीं अपितु अनिवार्य भी प्रतीत होता है। नई शिक्षा नीति के एक प्रस्ताव में ठीक ही कहा गया है कि हमारी संविधान की प्रस्तावना एवं उपयुक्त चार राष्ट्रीय लक्ष्यों को

रेखांकित करने वाले बुनियादी एवं अभीष्ट मूल्य हमारी मूल्यपरक शिक्षा का आधार बनने चाहिए। हमारे शालेय पाठ्यक्रम में मूल्यपरक शिक्षण को महत्वपूर्ण स्थान मिलना चाहिए। और इस मूल्यपरक शिक्षा की और आवश्यक ध्यान एवं समय देना चाहिए।

हमारी विविध समाजिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का प्रमुख शक्तिशाली स्रोत हमारी सामाजिक संस्कृति रही है। संस्कृति हमारे प्राचीन मूल्यों का सम्प्रेषण एवं नियन्त्रण करती आई है। भारतीय संस्कृति प्रारम्भ से ही एक आध्यात्मिक एवं अन्तमुख धार्मिक, दार्शनिक संस्कृति रही है और बराबर ऐसी ही चली आई है। इसमें और जो कुछ भी है, वह सब इस एक प्रधान और मौलिक विशेषता से ही उद्भूत हुआ है। अथवा वह किसी न किसी प्रकार इस पर आश्रित या इसके अधीन ही रहा है, यहां तक कि बाह्य जीवन को भी आत्मा की आभ्यन्तरिक दृष्टि के ही अधीन रखा गया है।

1.14 शिक्षा में मूल्यों का स्थान

बच्चों का सर्वांगीण विकास करना यही शिक्षा का मूल उद्देश्य है। भविष्य मे उत्तम नागरिक बनकर अपनी और समाज की आवश्यकताओं की पूर्ति करना उसके दायित्व के अंतर्गत आती है। इस आवश्यकताओं की पूर्ति उत्तम नागरिक बनने से ही होती है। उत्तम नागरिक यानि मूल्यवान नागरिक। उत्तम नागरिक तभी बन सकेंगे जब बच्चे उत्तम बनेंगे और बच्चे उत्तम तभी बनेंगे जब उन्हें अच्छे शिक्षक पढ़ायेंगे।

प्राचीन भारतीय शिक्षा में मूल्य का स्थान :-

भारतीय संस्कृति मूल्य पर आधारित है इसलिए आज भी विद्यमान है। ये मूल्य भारतीय शिक्षा व्यवस्था में भी प्रचलित थे। प्राचीन काल में गुरूकुल शिक्षा रीति थी। उसमें मानव मूल्यों को प्रमुखता दी जाती थी। बड़ों का आदर करना, छोटों

से प्यार, दीनों पर प्रेम, सहजीवियों से प्यार, दया, क्षमा, ममता, भक्ति, सहनशीलता, अहिंसा आदि मूल्यों के आचरण के अंतर्गत आती है। इनके पालन से गुणवान व्यक्ति मूल्यवान भी बन जाते हैं। अब प्रश्न यह उठता है कि ये सब मूल्य कहां से प्राप्त करें? कब और कैसे प्राप्त करें? मलयालम में एक कहावत है ''वौटियले शीलम् चुटले वरे '' अर्थात् छोटी उम्र में ही जो आदतें हम पर आ पड़ती है वही मृत्यु पर्यन्त रहती है।'' अर्थात् जो–जो मूल्य वांछित है वह विद्या की शुरूआत से ही होने चाहिए।

बुनियादी शिक्षा दर्शन में मूल्य शिक्षा :–

प्रारंम्भिक वर्षो में भारतीय चिन्तन को गांधी के विचारों एवं व्यवहार ने सबसे अधिक प्रभावित किया। गांधी का संपूर्ण जीवन दर्शन केवल उनके विचारों में ही नहीं बल्कि उनके व्यक्तित्व में भी झलकता है। उनका संपूर्ण जीवन सनातन मूल्येां पर आधारित रहा है। परिणामतः उनके विचारों में मूल्यों की पक्षधारिता सर्वत्र दिखाई देती है। अपनी शिक्षा व्यवस्था के संबंध में 1937 की वर्धा परिषद में बोलते हुए गांधीजी ने कहा था। ''अगर हम कौमी और आंतराष्ट्रीय संघर्ष को बंद करना चाहते हैं तो हमारे लिए जरूरी है कि जिस शिक्षा की मैंने हिमायत की है उससे अपने बालकों को शिक्षित करके शुद्ध और सुदृढ़ आधार पर इसकी शुरूआत करें।''

1.15 परिवार, विद्यालय और समाज में शिक्षा मूल्यों की भूमिका :–

1. परिवार

जन्मते ही बालक परिवार का सदस्य हो जाता है। बालक की प्रथम पाठशाला उसका घर तथा पहला गुरू उसकी माता होती है। इसलिए यह निर्विवाद सत्य है कि बच्चे की शिक्षा, चरित्र निर्माण तथा व्यक्तित्व विकास में घर के वातावरण का सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है। बालक परिवार में रहकर पारस्परिक व्यवहार के संस्कार एवं पारिवारिक कर्तव्यों की जानकारी भी पाता है, स्नेह, त्याग, परोपकार, मैत्री

आदि नैतिक मूल्यों की शिक्षा वह परिवार में ही पाता है। महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि अभिभावकों का जीवन और घर का वातावरण आदर्श हो, तभी बालक में आदर्श गुणों का संचार हो सकता है। अभिभावक वर्ग में माँ की जिम्मेदारी सबसे अधिक है। माँ यदि अपने बालक के सफल, सशक्त निर्माण और सर्वांगीण विकास के लिए कटिबद्ध हो जाए तो नई पीढ़ी का नव निर्माण करके राष्ट्र के विकास में चार चांद लगा सकती है। माँ की मानसिकता, गतिविधियाँ एवं क्रियाकलापों से बालक संस्कार ग्रहण करता है। अतः माँ को गर्भावस्था में तथा जन्म के उपरान्त सदैव अपने आपको घर के वातावरण को पूरी तरह से संयमित, संतुलित व व्यवस्थित बनाए रखना होगा। माँ बालक की मात्र जननी ही नहीं है, परन्तु उसके भावी स्वरूप की निर्मात्री और सच्ची शिक्षिका भी है। पिता बालक का सर्वांगीण पूर्ण संरक्षक है पिता की छत्रछाया में ही बालक सम्भावित बुराईयों से बच सकता है और सदाचार का अनुसरण करता रहता है।

2. विद्यालय

विद्यालय में प्रवेश लेते ही बालक प्रथम बार अपने माता–पिता एवं अन्य परिवारजनों से दूर होता है। विद्यालय के सोपानों से परिचित होता है। ऐसे में यह आवश्यक हो कि विद्यालय का वातावरण बाल सुलभ इच्छाओं के अनुरूप हो वहाँ उसके आकर्षण और मनोरंजन के साधन हो। शिक्षा संस्कारों की जननी है। अतः हमें शिक्षा के उद्देश्यों का निर्धारण राष्ट्र के अनुरूप करना होगा। आज आवश्यकता है शिक्षा के उन आदर्शों की जो सत्यम्, शिवम, सुन्दरम के मूल्य को समाज में पुनः स्थापित कर सके। इस के लिए शिक्षक से बड़ा दिशा निर्देशक कोई नहीं हो सकता। इसलिए विद्यालय में अध्यापक का स्थान सर्वोपरि स्वीकार किया गया है।

3. समाज

शिक्षा एक ऐसी प्रक्रिया है जो व्यक्ति को प्रत्यक्ष लाभ पहुंचाकर राष्ट्र एवं समाज को अप्रत्यक्ष लाभ पहुंचाती है। क्योंकि बच्चा जैसे ही अनुकरण करने योग्य

होता है सामाजीकरण की प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है, तथा जैसे ही उसमें समझ आती है वह संस्कृति ग्रहण करने लगता है। इस प्रक्रिया को पूर्ण करने के लिए परिवार एवं विद्यालय के अतिरिक्त मुख्य भूमिका समाज की रहती है।

1.16 मूल्य शिक्षा के सामान्य उद्देश्य :-

विद्यार्थियों के व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन में एक उत्तरदायी नागरिक बनने के लिए उन्हें प्रशिक्षित करना। समाजवाद, धर्मनिरपेक्षता, प्रजातंत्र जैसे राष्ट्रीय लक्ष्यों का उन्हें सही तरीकों से बोध कराना और उनके प्रति रूचि जागृत करना ताकि वे इनकी प्राप्ति में अपने समुचित व्यवहार में उदार बने और धर्म, भाषा, जाति, क्षेत्र, लिंग, आदि पर आधारित गलतफहमियों से ऊपर उठे। विद्यार्थियों में सत्य, सहयोग, प्रेम, करूणा, शांति एवं अहिंसा, साहस, समानता, स्वतंत्रता, मातृत्व, श्रमगरिमा एवं वैज्ञानिक दृष्टिकोण जैसे मौलिक गुणों का विकास करना। स्वयं एवं अपने साथियों के प्रति, स्वदेश के प्रति, अन्य देशवासियों के प्रति, जीवन एवं पर्यावरण के प्रति, सभी धर्मों एवं संस्कृतियों के प्रति विद्यार्थियों में समुचित दृष्टिकोण का विकास करना। देश की सामाजिक एवं आर्थिक परिस्थितियों के संबंध में उनमें वांछित सुधार लाने के लिए उन्हें प्रोत्साहित करना।

1.17 विभिन्न शिक्षा आयोगों व समितियों के मूल्य शिक्षा पर विचार

राधाकृष्णन आयोग (1948-49) के सुझाव

राधाकृष्णन आयोग ने मूल्य शिक्षा को पाठ्यक्रम का अभिन्न अंग माना। आयोग के अनुसार विद्यालय स्तर पर छात्रों को नैतिक और धार्मिक सिद्धांतों को व्यक्त करने वाली कहानियां पढ़ाई जाएँ। छात्रों को महान व्यक्तियों की जीवनियाँ पढ़ाई जाएँ। जीवनियों में महान व्यक्तियों के उच्च विचारों और श्रेष्ठ भावनाओं का समावेश किया जाए। विश्वविद्यालय स्तर पर संसार के धार्मिक ग्रंथों में से सार्वभौमिक महत्व के चुने हुए भागों को पढ़ाया जाएँ।

श्रीप्रकाश समिति (धार्मिक तथा नैतिक शिक्षा समिति, 1959) के सुझावः-

इस समिति की अध्यक्षता श्रीप्रकाश ने की व धार्मिक तथा नैतिक शिक्षा के संबंध में यह सुझाव दिया कि विद्यार्थियों को सब धर्मों के आधारभूत विचारों की शिक्षा तुलनात्मक विधि से दी जाएँ। छात्रों को महान धार्मिक नेताओं की जीवनियों और शिक्षाओं के सार से अवगत कराया जाएँ। जैसे–जैसे छात्रों का मानसिक विकास हाता जाएँ, वैसे–वैसे उनको नैतिक, दार्शनिक और आध्यात्मवादी सिद्धांतों से परिचित कराया जाए। प्राथमिक से लेकर विश्वविद्यालय स्तर तक के लिए उपयुक्त धार्मिक और नैतिक पुस्तकें तैयार कराई जाए। इस हेतु प्राथमिक, सार पर समिति ने सुझाव दिया कि–विद्यार्थियों के प्रति सप्ताह में दो घण्टे नैतिक शिक्षा प्रदान की जाएँ। माध्यमिक स्तर पर छात्रों को संसार के महान धर्मों के महत्वपूर्ण सिद्धांतों की शिक्षा दी जाएँ। पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं के रूप में समाजसेवा की भावना का विकास किया जाएँ। विश्वविद्यालय स्तर पर सामान्य शिक्षा के पाठ्यक्रम के विभिन्न धर्मों के सामान्य अध्ययन को अनिवार्य अंग बनाया जायँ।

शिक्षा आयोग (1964–66) के सुझाव :-

राष्ट्रीय शिक्षा आयोग जिसकी अध्यक्षता प्रो. दौलतसिंह कोठारी ने की। धार्मिक और नैतिक शिक्षा के संबंध में अनेक विचार व्यक्त किये। विद्यालय स्तर पर विद्यार्थियों को आधारभूत नैतिक सामाजिक और आध्यात्मिक मूल्य की शिक्षा दी जायँ यथा–सत्य, ईमानदारी, सामाजिक उत्तरदायित्व, पशुओं पर दया, बुजुर्गों के प्रति सन्मान, दुःखी और दरिद्रों के प्रति सहानुभूति इत्यादि। उक्त मूल्यों का विद्यालय के कार्यक्रमों का अभिन्न अंग बनाया जाएँ। मूल्यों की शिक्षा देने के लिए समय तालिका में प्रति सप्ताह कुछ घण्टे निर्धारित किये जाएँ। विद्यालयों के पाठ्यक्रमों में संसार के सब धर्मों को उचित स्थान दिया जाएँ। प्राथमिक स्तर पर भारत और संसार के महान धर्मों से चुनी गई रोचक कहाँनियों द्वारा आधारभूत

मूल्यों और समस्याओं पर शिक्षक और छात्रों द्वारा विचार विमर्श किया जाएँ। माध्यमिक स्तर पर उच्च कक्षाओं में महान धार्मिक और आध्यात्मिक नेताओं की कहाँनियां पढ़ाई जाएँ। इसे सफल बनाने के लिए शिक्षक द्वारा प्रयास होना चाहिए। राष्ट्रीय आयोग (1964–66) ने लिखा है कि नैतिक व मूल्य शिक्षा प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष प्रभाव के कार्यों पर अधिक जोर दिया गया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति – 1968

- सामाजिक दृढ़ता तथा राष्ट्रीय एकता को बढ़ाने के लिए समान स्कूल पद्धति को अपनाया जायेगा।
- प्रतिभाओं की खोज के लिए हर सम्भव प्रयास किये जायेंगे।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) :–

मूल्य शिक्षा का विस्तार से वर्णन करते हुए स्पष्ट किया है कि मूल्य शिक्षा कक्षा व पाठ्यचर्या तक ही सीमित नहीं रहनी चाहिए बल्कि स्कूल और समुदाय के बिच संयोजन की स्थापना करनी चाहिए और इसे लोकगीतों व सामुदायिक गायन जैसी गतिविधियाँ का अंग बनाना चाहिए। इस प्रक्रिया के पीछे बुनियादी कारण यह है कि मूल्य का आचरण व व्यवहार का रूप दिया जा सके।

वस्तुतः कुछ समय पहले विज्ञान के साथ मूल्यों, विश्वास और श्रद्धा का मिश्रण निषिध माना जाता था। परन्तु आज मानव जाति अच्छी तरह समझ गई है कि मूल्यों की अपेक्षा करके की गई वैज्ञानिक उन्नति विनाशकारी सिद्ध होगी। प्रसिद्ध शिक्षाविद व पूर्व राष्ट्रपति डॉ. जाकिर हुसैन का भी यह मत था कि ''हमें प्रावधिक के लिए नैतिकता का बलिदान नहीं देना चाहिए। अपितु प्रावधिक को इस भाव पर्यावरण में प्रस्तुत करना चाहिए। ताकि वह उच्च मानव मूल्यों को शक्तिशाली व मजबूत करने का साधन बन जाएँ।'' अतः आज विद्यालयों की इस समकालीन

परिवेश में महत्व की भूमिका बन जाती है, कि वे इस गुरूत्तर उत्तरदायित्व का पालन करे।

केन्द्रीय सलाहकार बोर्ड की नीति संबंधी रिपोर्ट (1992) :-

बोर्ड ने इस और संकेत करते हुए माना है कि पाठ्यचर्या द्वारा मूल्यों की शिक्षा व पद्धति की जानकारी दी जानी चाहिए। फलतः यह विद्यालयों व अन्य शैक्षिक संस्थाओं का और विशेषकर अध्यापकों का उत्तरदायित्व है कि शिक्षण अधिगण प्रक्रिया को इस भांति संचालित करें कि बच्चे सही अर्थों में मूल्य शिक्षा ग्रहण कर सकें। अध्यापक के नाते विद्यार्थियों को मूल्य शिक्षा प्रदान करना उनका एक ऐसा अपरिहार्य कर्म है जिसके उत्तरदायित्व से ही वे किसी भी भांति पलायन नहीं कर सकते। अध्यापकों द्वारा मूल्य शिक्षा से पलायन का अर्थ है। विद्यालय ही बंद कर दिये जायें।

एस.बी. चव्हाण समिति (1999) :-

समिति ने मूल्य आधारित शिक्षा को रेखांकित करते हुए शिक्षक शिक्षा में मूल्य शिक्षा के समावेश पर अत्यन्त प्रासंगिक विचार प्रकट करते हुए सुझाव दिया है कि ''मूल्य शिक्षा को शिक्षण, प्रशिक्षण कार्यक्रम के पाठ्यक्रम का अंग होना चाहिए। भविष्य में शिक्षकों को मूल्य शिक्षा के प्रत्यय से परिचित कराया जाना चाहिए। वे सभी विधियाँ व प्रविधियाँ जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से छात्रों के मनोवैज्ञानिक विकास के विभिन्न चरणों में मूल्यों का ज्ञान देने में लाभप्रद हो, को शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों का अनिवार्य घटक बनाया जाना चाहिए।''

1.18 मूल्य शिक्षा के प्रति शिक्षक की भूमिका :-

शिक्षक समाज की धुरी होता है। जिसके परितः सर्वत्र संस्कार विद्यमान होते हैं तथा जिसे छात्रों के बीच संस्कारित करने की आवश्कता होती है। साथ ही शिक्षक को एक आदर्श तथा प्रतिदर्श माना जाता है। शिक्षक अपने ज्ञान एवं अनुभव

से छात्रों में मूल्य संस्कारित कर सकते हैं। तथा छात्रों के सामने एक उदाहरण प्रस्तुत कर सकते हैं। एक अच्छे शिक्षक का सर्वोत्तम गुण यह है कि उसे विषयवस्तु या उस क्षेत्र में उसके पास वरेण्य गुण विद्यमान हो। महात्मा गांधी ने कहा था The Teacher is nation Builder (शिक्षक राष्ट्र निर्माता है।) अस्तु छात्रों में मूल्य शिक्षा संस्कारिता करना एक भगीरथ प्रयास कहा जा सकता है, तथा इसका कार्यान्वयन होना अनिवार्य सा प्रतीत होता है। संपूर्ण शिक्षा प्रक्रिया की श्रृंखला में अध्यापक की भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। शासकीय स्तर पर मूल्य शिक्षा की चाहे कितनी ही मनोहर योजना बना ली जाएँ किंतु अध्यापक यदि उसे ठीक ढंग से कार्यान्वित न करे तो वह योजना कदापि सफल नहीं हो सकती। अतः सबसे पहले अध्यापकों में विविध नैतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों का आभ्यन्तरीकरण अत्यन्त आवश्यक है। दीप से दीप जलता है वैसे ही नैतिकता–नैतिकता को जन्म देती है। अध्यापक छात्रों के सामने नैतिक आदर्श प्रस्तुत करे जिन्हें देखकर तथा अनुभव करके विद्यार्थी भी मूल्यों का आचरण कर सके।

हमारे समाज में अनवरत मूल्य ह्रास एक अभिशाप सा प्रतीत होता है। इसका ह्रास होने से मानवीय व्यवहार में विकृति आ गई है तथा जीवनादर्श का लोप हो रहा है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में भ्रष्टाचार अराजकता फैल रही हे, जिसका सीधा असर हमारे सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक जीवन को प्रभावित कर रहा है। इसलिए मूल्य शिक्षा की प्रक्रिया को विद्यालयी शिक्षा व्यवस्था में शुरूआती दौर से ही आरंभ करने की नितान्त आवश्यकता है। इसके लिए सबसे उचित माध्यम है शिक्षक। जो शिक्षार्थियों की हर एक समस्या व कठिनाइयों को दूर कर उस खोए हुएँ मूल्यों को प्राप्त करने में कारगर सिद्ध हो सकते हैं। अध्यापक को मूल्य शिक्षा का अग्रदूत कहा जाता है। मूल्य शिक्षा के हर कार्य में वह नेतृत्व करता है। अध्यापक विद्यार्थियों का आध्यात्मिक पिता माना जाता था। इसी प्रकार अध्यापक को समाज नेतृत्व करने वाला समाज रचियता कहा जाता है। अध्यापक अगर संस्कृति का उपासक गतिमान,

ज्ञानी, संवेदनशील, शांत स्वभाव का हो तो मूल्य शिक्षा का कार्य वह और गति से कर पाएगाँ।

उपयुक्त सब बातें हमें इस बात की ओर खिंचती जा रही है कि मूल्य शिक्षा के कार्य में अध्यापक की भूमिका सर्वश्रेष्ठ है, उस पर सारे समाज व छात्रों का विश्वास है। हमारे देश को अगर मूल्यपरक जीवन फिर से कोई प्रदान कर सकता है, तो वह है अध्यापक। सामाजिक जीवन का सच्चा आधार नैतिकता तथा सचरित्रता ही है। सदाचार ही शिक्षक की सफलता की कुंजी है। सदाचार का रास्ता सरल है। नैतिकता रूपी पौधा विश्वास रूपी भूमि एवं श्रद्धा रूपी सिंचन की मांग करता है। अतीत कालीन भारतीय समाज में शिक्षक को एक उच्चासन प्रदान था, उस पर विश्वास किया जाता था, और श्रद्धा भी। शिक्षक विश्वस्त एवं समावृन्त होने पर ही वे धनादि के लाभ से मुक्त होकर सामाजिक नैतिकता के सूत्रधार बने। मूल्य शिक्षा कृति प्रधान है, इसलिए अध्यापकों को अपना आचरण, अपने उच्चार अपनी मधुरवाणी को सदा के लिए पवित्र रखना होगा। अतः आवश्यकता इस बात की है कि शिक्षक एवं विद्यार्थियों में मधुर संबंध स्थापित किये जायँ। वैदिक काल के समान शिक्षक आज की ज्ञान वृद्धि एवं अपने कर्तव्यों का पालन करे तो मूल्य शिक्षा के कार्य में उच्च स्थान जरूर मिलेगा।

राष्ट्र निर्माण में शिक्षक की अहम भूमिका होती है। कहते हैं देश के भविष्य का निर्माण कक्षाओं में हो रहा है। निःसन्देह जैसा शिक्षक होगा, वैसे ही उसके छात्र होंगे, उसी प्रकार का समाज बनेगा। तथा उसके अनुरूप राष्ट्र का भविष्य बनेगाँ। अतः आवश्यकता है कि शिक्षण योग्य हो, उनमें व्यावसायिक योग्यता के साथ कर्तव्य निर्वहन के प्रति दृढ़ इच्छाशक्ति हो। मूल्य शिक्षा के बारे में शिक्षक को स्वयं ही तैयारी करनी होगी। मूल्य का अर्थ, मूल्यपरक शिक्षा का अर्थ, मूल्य से संबंधित जीवन प्रणाली, देश के महान विभूतियों का कार्य इसके साथ ही छात्रों में मूल्यों का निर्माण कर पाऊंगा इस तरह के प्रश्न में अध्यापक द्वारा चिंतन जरूरी है। शिक्षक

Regional Institute of Education LIBRARY Bhopal

छात्रों के सामने नैतिक आदर्श प्रस्तुत करे, देखकर तथा अनुभव करके विद्यार्थी भी नैतिक मूल्यों का आचरण करे। इसलिए शिक्षकों को अपने कार्य के प्रति निष्ठावान एवं ईमानदार होना चाहिए। जब तक यह नहीं होता तब तक मूल्य का निर्माण सफल नहीं हो सकता।

1.19 अध्ययन की आवश्यकता :–

प्राथमिक शिक्षा में सुधार हेतु विभिन्न योजनायँ बनाई गई व उनका क्रियान्वयन किया गया इसके साथ शिक्षा का प्रसार होता गया लेकिन आज की स्थिति में सभी ओर सभी वर्गों में मूल्य हीनता और अनैतिकता देखने को मिलती है। आज नैतिक, सामाजिक, राष्ट्रीय, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, कौटुम्बिक मूल्यों में कमी देखने और लगातार गिरावट होते नजर आती है यह गिरावट शिक्षा के क्षेत्र में भी देखने को मिल रही है। इसके कारण ही उदासीनता, उत्तरदायित्व, अनुशासन हीनता आदि का जन्म हुआ है। अंततः मूल्यों की रूजवण पुनः प्रतिष्ठा के अभाव के कारण शिक्षा में गुणात्मक सुधार की आशा हेतु स्थिर होगी। शिक्षक समाज एवं राष्ट्र के कर्णधार हैं। शिक्षक के सकारात्मक दृष्टिकोण के माध्यम से ही छात्रों में बौद्धिक एवं तार्किक शक्ति का विकास होता है। उनमें इतनी बौद्धिक एवं शारीरिक क्षमता एवं समझ उत्पन्न होती है कि वे भविष्य में देश के नींव के मजबूत पत्थर साबित होते हैं। दूसरी ओर आज के विद्यालय में समस्या यह है कि वे केवल पुस्तकीय ज्ञान विद्यार्थियों पर थोप देते हैं। छात्रों को अपने रूचि के विपरीत कार्य करने पड़ते हैं। जिसका परिणाम यह होता है कि उनमें उत्साह की कमी हो जाती है और वे अच्छे मूल्यों को अपने व्यक्तित्व में शामिल नहीं कर पाते हैं। इस प्रकार पुस्तकीय ज्ञान से विद्यार्थी का व्यक्तित्व स्वस्थ व्यक्तित्व नहीं बन सकता। अध्यापकों को चाहिए कि वे पुस्तकीय ज्ञान देने के अतिरिक्त अपने जीवन को व्यवहार में इस तरह ढाले जिससे अन्य छात्रगण उनका अनुसरण कर सकें और उनमें भी अनुशासन, देश–प्रेम, कर्तव्यपरायणता जैसे मानवीय मूल्यों का विकास संभव हो सके।

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद के शब्दों में–''उनका (अध्यापकों का) स्वयं का चरित्र इतना उज्जवल हो कि उनके कहने और करने में कोई अन्तर न हो। जब हम इन आर्दशों को व्यवहार में परिणित करेंगँ, तब ही हम अपने राष्ट्र के उज्जवल भविष्य के विषय में आशावान रह सकते हैं।''

अध्यापकों का विशेषकर प्राथमिक स्तर के अध्यापकों का मूल्यों के प्रति जो दृष्टिकोण है वह वर्तमान में प्राथमिक विद्यालयों में कहाँ तक सकारात्मक है तथा कहाँ तक नकारात्मक है, इसी समस्या के प्रति शोधकर्ता ने अपना अनुसंधान कार्य चुना है जो वर्तमान परिप्रेक्ष्य में बहुत महत्व रखता है।

1.20 समस्या कथन

मानव एक ऐसा प्राणी है जिसके कुछ आधारभूत मूल्य होते हैं, ये मूल्य न्यूनाधिक मात्रा में सभी व्यक्तियों में पाये जाते हैं। जब मूल्यों की बात करते हैं तो मूल्यों की सीमा तक वे समस्त मानवीय गुण आते हैं जिनका मानव से आदिकाल से सम्बन्ध रहा है। इन मूल्यों में सत्य, अहिंसा, दया, परोपकार व कर्तव्यपरायणता, शालीनता, मितव्ययता, सदाचार आदि उल्लेखनीय है, वर्तमान में शिक्षा प्रणाली का एक प्रमुख उद्देश्य शिक्षण प्रक्रिया द्वारा विद्यार्थियों में मूल्यों का विकास करना तथा शिक्षण प्रक्रिया द्वारा मूल्यों का शिक्षण तभी प्रभावी हो सकता है जबकि स्वयं अध्यापकों में विभिन्न मूल्य विद्यमान हों। चूंकि शोधकर्ता ने प्राथमिक स्तर के अध्यापकों के मूल्यों का अध्ययन किया है अतः शोध संबंधी क्षेत्र के निर्धारण के पश्चात समस्या का विधिवत कथन अर्थात् अनुसंधान का शीर्षक इस प्रकार बनता है।

''प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों के मूल्यों का अध्ययन''

1.21 शोधकार्य में प्रयुक्त चर

सामान्यतया शिक्षा के क्षेत्र में शोधकर्ता विभिन्न चरों की पहचान करता है, उनका स्वतंत्र तथा आश्रित चरों के रूप में वर्गीकरण करता है। वर्तमान शोधकार्य में छः आश्रित चर और आठ स्वतंत्र चरों को सम्मिलित किया गया है।

आश्रित चर –

1.	सैद्धान्तिक मूल्य	4.	सामाजिक मूल्य
2.	आर्थिक मूल्य	5.	राजनैतिक मूल्य
3.	सौन्दर्यात्मक मूल्य	6.	धार्मिक मूल्य

स्वतंत्र चर –

1.	लिंग	–	1. पुरूष 2. स्त्री
2.	क्षेत्र	–	1. ग्रामीण 2. शहरी
3.	उम्र	–	1. 20 से 32 वर्ष
			2. 33 से 45 वर्ष
			3. 46 से अधिक वर्ष
4.	विद्यालय के प्रकार	–	1. सरकारी
			2. सरकारी सहायता प्राप्त
			3. प्राईवेट
5.	अनुभव	–	1. 1 से 5 वर्ष
			2. 6 से 10 वर्ष
			3. 11 से अधिक वर्ष
6.	आय	–	1. 2500 से 4000 रु.
			2. 4100 से 5500 रु.
			3. 5600 से अधिक रु.

1.22 समस्या का सीमांकन

1. प्रस्तुत अध्ययन में गुजरात राज्य के पंचमहाल जिला के कुछ ग्रामीण व शहरी विद्यालयों को ही शामिल किया गया है।
2. इस अध्ययन में प्राथमिक विद्यालयों के मात्र 121 शिक्षकों को ही चुना गया है।
3. प्रस्तुत अध्ययन में शिक्षक एवं शिक्षिकाओं दोनों का चयन किया गया है।

1.23 शोध के उद्देश्य

1. प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों में लिंग के आधार पर मूल्यों का अध्ययन करना।
2. प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों में क्षेत्र के आधार पर मूल्य का अध्ययन करना।
3. प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों में उम्र के आधार पर मूल्यों का अध्ययन करना।
4. प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों में विद्यालयों के प्रकार के आधार पर मूल्यों का अध्ययन करना।
5. प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों में अनुभव के आधार पर मूल्यों का अध्ययन करना।
6. प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों में आय के आधार पर मूल्यों का अध्ययन करना।

1.24 परिकल्पनाएँ

Ho_1. प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों में लिंग के आधार पर मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं है।

Ho_2. प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों में क्षेत्र के आधार पर मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं है।

Ho_3. प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों में उम्र के आधार पर मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं है।

Ho_4. प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों में विद्यालयों के प्रकार के आधार पर मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं है।

Ho_5. प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों में अनुभव के आधार पर मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं है।

Ho_6. प्राथमिक विद्यालयों के शिक्षकों में आय के आधार पर मूल्यों में सार्थक अंतर नहीं है।